आधुनिक जीवन और पर्यावरण संकट

डॉ0 राकेश प्रताप शाही
समाजशास्त्र विभाग
श्री भगवान महावीर पी0 जी0 कालेज, पावानगर (फाजिलनगर) कुशीनगर

प्रस्तावना

संस्कृति तात्विक रूप से व्यापक है जिसकी परिभाषा करना सरल कार्य नहीं है। इसे न तो व्याकरण के नियमों में ढाला जा सकता है और न विज्ञान के सूत्रों की तरह प्रयोगशालाओं में परखा जा सकता है। संस्कृति अपना व्याकरण स्वयं रचती है, उसे किसी दूसरे के बनाए हुए नियमों की आवश्यकता नहीं रहती। भारतीय संस्कृति जीवन के विविध आयामों के सर्वोत्कृष्ट रूप को ही परिपुष्ट और संवंर्धित करती है। भारत की संस्कृति न केवल मूल रूप से नैतिक और शाश्वत मूल्यों पर आधारित रही है, वरन् अन्य संस्कृतियों के सम्पर्क में आने पर इसने अन्य संस्कृतियों से भी श्रेष्ठ मूल्यों को अंगीकृत करते हुए अपने को पुष्ट और समृद्ध किया है। इस परिप्रेक्ष्य में भारतीय संस्कृति की गंगा से तुलना की जा सकती है, जिसमें अनेक नदियाँ समाहित होकर अन्ततः गंगा बन जाती हैं। जिस प्रकार गंगा में अनेक अवांछित तत्व मिलकर उसे प्रदूषित कर देती हैं, उसी प्रकार भारतीय संस्कृति में कुछ अवांछित तत्व मिलते रहे हैं। तथापि उसकी धारा अक्षुण्ण गति से प्रवाहमान है। भारतीय संस्कृति मानव जीवन की ऊर्जा के मूल स्रोत को खोजती है और उसके साथ प्रवाहित होती है। यह संस्कृति जीवन के किसी भी पक्ष को नकारती नहीं, उसे संस्कारित करती है अथवा और अधिक सुन्दर करती है एवं अधिक सर्वहितकारी बनाती है।इसमें सभी के लिए स्थान है, क्योंकि गहरे में स्वयं के अतिरिक्त दूसरा है ही नहीं। बस एक ही प्राणतत्व सर्वव्यापी है– एक ही चैतन्य, एक ही आत्मा, एक ही विराट् और एक ही सत्ता का विस्तार और एक ही अस्तित्व। जो इस रहस्य को जान लेगा, वही भारतीय संस्कृति के रहस्य को जान सकेगा।

प्राचीन इतिहास में मानव का प्रमुख ध्येय प्राकृतिक व्यवस्था के साथ तारतम्य रखना था। मुनस्मृति, धर्मशास्त्रों एवं उपनिषदों के नियम इस तारतम्य की इच्छा आवश्यकता को प्रदर्शित करते हैं। प्राचीन काल में पर्यावरण के प्रति भारतीय दृष्टि को कवि टैगोर शब्दों में प्रकट करते हैं– 'वन और प्राकृतिक जीवन मानव जीवन को एक निश्चित दिशा देते थे। मानव प्राकृतिक जीवन की वृद्धि के साथ निरन्तर संपर्क में था। वह अपनी चेतना का विकास आसपास की भूमि से करता था। उसने विश्व की आत्मा तथा मानव की आत्मा के बीच के संबंध को महसूस किया।' आधुनिक संदर्भ में प्रिंसटन विश्वविद्यालय के प्रोफेसर रिचर्ड फॉक झुकाव देते हैं– 'एक इस प्रकार की नई व्यवस्था के आविष्कार की आवश्यकता है, जिसमें व्यापक स्तर पर यह सहमति हो कि सभी मनुष्य एक मानव समाज के सदस्य हैं।' आदिम मनुष्य भी अपने और पृथ्वी के संबंध को जानता था। इसलिए उसने पृथ्वी को माँ की संज्ञा दी और स्वयं को उसने उसका पुत्र कहा। पृथ्वी से मनुष्य का संबंध उतना ही नहीं कि वह उसके ऊपर रहता है और पोषित होता है, बल्कि पृथ्वी उसे एक पर्यावरण भी प्रदान करती है, जिसमें जीने वाले विभिन्न जीवधारियों और उगने वाले पेड़–पौधों से भी वह आत्मीय संबंध सूत्र में जुड़ा है। प्रदूषण आज की दुनिया की अहम समस्या है। प्रदूषण से हमारी वसुंधरा मैली और विषैली हो रही है। पर्यावरण, प्रदूषण और परिस्थितिकी विज्ञान हमारे जीवन के तीन महत्वपूर्ण घटक हैं। वैसे तो प्राचीन काल से ही इनका महत्व रहा है, लेकिन आज के प्रदूषण प्रधान युग में इनका महत्व और बढ़ गया है। इन्हें आज हम एक–दूसरे से अलग नहीं कर सकते। प्रकृति व्यक्ति के भीतर और बाहर एक सांस्कृतिक पर्यावरण की रचना करती है। दोनों का सृजन एक प्रकार का पर्यावरण है। पर्यावरण जीवों का आवास है, जिस पर प्रदूषण तथा अन्य कारक कार्यशालाएँ खोलकर उसका एक भिन्न उपयोग करने लगे हैं। अतीत में भारत की पर्यावरण नीति किस प्रकार रही है यह प्रश्न अति महत्वपूर्ण होते हुए भी इसके अधिक अन्वेषण की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि पर्यावरण की दृष्टि से हमारा अतीत किसी से छिपा नहीं है। भूमि पर एक नहीं कई प्रकार के प्रदूषण पाये जाते हैं, जो निम्नलिखित हैं :

भूमि प्रदूषण

भूमि प्रदूषण अर्थात् भूमि का दुरुपयोग और उसका ऐसा शोषण (न कि दोहन) जिससे वह अपने प्राकृतिक क्रियाकलाप के लिए उपयुक्त न रह सके और विकृत हो जाए। मनुष्य के हाथों ऐसा निर्माण जो धरती के सहज और नैसर्गिक रूप को विद्रूप कर डाले वह भी भू–प्रदूषण का ही अंग कहा जाएगा। औद्योगिकीकरण और उससे संबद्ध क्रिया–कलाप भूमि के प्राकृतिक स्वरूप में बाधा पहुँचाता है। उससे निकलने वाले रसायन, अपशिष्टों के ढेर, कूड़ा, नालियों की गंदगी, धुआँ, गैस आदि भी आसपास के जीवन और वातावरण में दखल देते हैं। खादानें, इस्तेमाल से बची चीजें, गड्ढे ही नहीं कृषि के उपयोग में आने वाले रसायन भी मिट्टी के स्वरुप को बदल कर रख देती है, जिससे भूमि किसी इस्तेमाल में न आने के कारण भूमि प्रदूषण का ही एक नमूना कही जा सकती है। इस्तेमाल करके फेंकने की प्रवृत्ति इतनी अधिक हो गई कि बहुत सारा कचरा पैदा हो जाता है। अधिक कचरा पैदा करना भूमि के लिए अभिशाप है, जिसके कारण उसे प्रदूषण का बोझ उठाना पड़ता है। कूड़ा–कचरा घरों का ही नहीं प्रायः फैक्ट्रियों, उद्योगों, खदानों, निर्माण कार्यों में इस्तेमाल न की गई चीजों, इस्तेमाल कर छोड़ दी गई चीजों का भी होता है। मुख्यतः तरल पदार्थ, तेल, पेंट, तेजाब, मल–मूत्र, रद्दी, कीचड़, रसायन क्रिया करके नई–नई दशाएँ उत्पन्न कर रहे हैं। पर्यावरण की इन दशाओं तथा परिवर्तनों का अध्ययन ही पारिस्थितिकी विज्ञान है।

पर्यावरण पृथ्वी के एक छोर से दूसरे छोर तक पसरी हुई एक विराट देह है, जिस पर प्रदूषण असर डालकर रोगों की तरह हमारा अहित करता है और इस क्रिया–प्रतिक्रिया का जो परिणाम होता है वह पारिस्थितिकी विज्ञान के माध्यम से हमारे सामने आता है। जमीन, पानी और हवा का मिला–जुला रूप ही पर्यावरण है। यह पर्यावरण पहले परिणाम–स्वरूप इसमें अकस्मात् जीवन पनपा और तभी से पर्यावरण में जीवन प्रवाहमान है। आज मानव क्रियाकलापों के कारण प्रकृति का संतुलन बिगड़ता जा रहा है। सबसे बड़ा कारण यह है कि प्रकृति का अंधाधुंध उपयोग किया जा रहा है। जिससे एक ओर प्राकृतिक संपदा में कमी आ रही है। दूसरी ओर उसकी क्षतिपूर्ति नहीं हो पा रही है। यह भी विचारणीय है कि स्थल, वायु और जीव मंडल एक सुनिर्धारित इकोसिस्टम के अर्न्तगत प्रकार्यरत हैं। जब भी किसी एक इकोतंत्र में कोई क्षति या परिवर्तन होता है तो उसका प्रभाव दूसरे इकोतंत्र पर भी पड़ता है। आज परिस्थिति यह है कि नगरीकरण, वन–विनाश, बाढ़, भूचाल, सूखा और अनेक विकास कार्यो के कारण पृथ्वी का इकोसिस्टम बिगड़ रहा है। स्थल मंडल में कंकरीट की कई मंजिला इमारतें बन जाने से अब हरी–भरी खेती की जमीनें कम होती जा रही हैं। उस पर शहरी लोगों का आधिपत्य हो गया है जहाँ वे मिल, फैक्ट्रियों, ठोस धातु की वस्तुएँ भी लोगों का आधिपत्य हो गया है जहाँ वे मिल, फैक्ट्रियों, ठोस धातु की वस्तुएं भी मिट्टी की गुणवत्ता को बदल देते हैं। प्रायः जब इन चीजों के ढेर खड़े हो जाते हैं तो उसमें रासायनिक परिवर्तन होते हैं। जब उन पर वर्षा होती है तो उनके प्रदूषक तत्व जमीन के नीचे भूमिगत जल में पहुँच जाते हैं जो जल को ही नहीं भूमि को भी प्रदूषित कर देते हैं। संसार भर में लगभग दो करोड़ वर्ग किलोमीटर भूमि की हानि हर वर्ष होती जा रही है। दिल्ली इसका एक उदाहरण है जहाँ के बहुत से गाँव अब नाम को रह गए हैं और वे शहरी आवास योजनाओं के शिकार हो गए हैं। यह नहीं भूल जाना चाहिए कि मिट्टी एक ऐसा संसाधन है जिसका बार–बार नवीनीकरण संभव नहीं। भूमि को नाशक जीवों और कीटों से बचाने के लिए आजकल खेतों में अनेक दवाओं प्रयोग होता है। जीव और वनस्पति तो स्वयं नहीं बदल सकते, मनुष्य को ही अपनी दृष्टि बदलनी होगी, जिससे पर्यावरण की रक्षा हो सके।

जल प्रदूषण

जल धरती का महत्वपूर्ण तत्व है। कहा जाता है कि प्रारंभ में जल ही जल था। धीरे–धीरे पृथ्वी ठंडी हुई और धरती का स्थलीय स्वरूप उभरकर सामने आया। पुराने जमाने में पीने, नहाने, कपड़े धोने तक का जल का उपयोग सीमित था, किन्तु कृषि और उद्योगों के विकास के साथ अब उसकी आवश्यकता ही नहीं बढ़ी है, बल्कि उसकी उपलब्धता में कमी भी आई है और प्रदूषण भी बढ़ा है। इसके बावजूद वनों का कटान और प्रदूषण के कारण जल की स्थिति शोचनीय बनी हुई है। जंगलों के कट जाने से जल की समस्या उठ खड़ी हुई है। शहरों की जनसंख्या और भी बढ़ी है। दिल्ली जैसे

शहर में इस वक्त 450 एमजीडी पानी की जरूरत होती है, जिसे पूरा कर पाना संभव नहीं होता। किन्तु इक्कीसवीं सदी के में ही जब यह खपत 1760 एमजीडी पहुँच जाएगी तब लोग पानी की बूंद के लिए तरसेंगे।' वृक्षों के अभाव में तापमान बढ़ रहा है, जिससे हिम अधिक गलता है और पानी व्यर्थ जाता है। खनन से भी कई जल स्रोत सूख चुके हैं। जल स्रोत सूखे ही नहीं है, बल्कि जो बचे हैं वे प्रदूषण के शिकार हैं। गंगा जैसी पवित्र नदी भी इससे नहीं बच पाई है। सामान्यतः जल को प्रदूषित करने में इन पदार्थों का हाथ होता है–

- मल जल का प्रवहन
- औद्योगिक इकाइयों से निष्कासित अपशिष्ट, जिनमें जहरीले रसायन, नाइट्रेट, फॉसफोरस, खनिज तथा रेडियो धर्मी पदार्थ सम्मिलित हैं।
- ताप बिजली घरों, धातु उद्योगों, आणविक उर्जा तथा पेट्रोलियम उद्योग के अपशिष्ट हैं।
- कृषि में काम आने वाले उर्वरक, कीटनाशक, डी.डी.टी आदि
- ठोस वस्तुएँ, जैसे परित्यक्त वाहन, कूड़ा आदि
- खदान के अपशिष्ट

यह सारे अपशिष्ट या तो जल में घुल जाते हैं या कोई और प्रतिक्रिया पैदा करते हैं। आने वाले वर्षों में यदि प्रदूषण बढ़ा तो शुद्धीकरण की समस्या और भी बढ़ जाएगी। अतः जल प्रदूषण से बचने के लिए उपाय निकाले जाने चाहिए। यदि ऐसा न हुआ तो हैजा, पीलिया, टायफायड, पेचिश और आंत्रशोध जैसी बीमारियाँ फैलेंगी। भारत में 75 प्रतिशत रोग प्रदूषित जल के कारण भी होते हैं।

वायु प्रदूषण

जल प्रदूषण की भांति ही वायु प्रदूषण भी एक बहुत बड़ी समस्या है। वायुमंडल के मुख्यतया तीन स्तर होते हैं। पहला स्तर स्थल से 17 किलोमीटर ऊँचा माना जाता है। यह जलवायु को निर्धारित करता है। दूसरे स्तर पर लगभग 40 किलोमीटर की ऊँचाई तक ओजोन गैस का क्षेत्र है। इसके ऊपर का स्तर ऑयन गैस के कणों से युक्त होता है और जीव–जंतुओं को विकिरण के प्रभाव से बचाता है। सबसे ऊपरी क्षेत्र विसर्जन का क्षेत्र कहलाता है, क्योंकि यहाँ से गैस के अणु अंतरिक्ष में विसर्जित होते हैं। आज विश्व में दो अरब टन कोयला और एक अरब टन तेल हर वर्ष जलाया जाता है जिससे कार्बन–डाईआक्साइड और कार्बनिक क्षार पैदा होता है। इससे ध्रुवों की बर्फ पिघलती है और ऑक्सीजन की मात्रा में कमी आ जाती है। वायुमंडल में प्रदूषण कभी दैवी आपदाओं या प्राकृतिक कारणों से भी होता है – जैसे ज्वालामुखी के फटने, धूल भरी आंधी चलने या जंगलों में आग लग जाने से। मामूली सी धूल भी पर्यावरण के प्रदूषण से जलवायु में विष घोल देती है। दिनोंदिन मोटर–गाड़ियों की बढ़ती संख्या भी प्रदूषण के भयंकर परिणाम सामने ला रही है। दिल्ली को ही लीजिए – यहाँ वाहनों की इतनी भीड़ है कि उनके धुएँ से यहाँ की सड़कें धुमैली बनी रहती हैं। यह चिंताजनक स्थिति इक्कीसवी सदी में और भी भयावह हो जाएगी। वायु प्रदूषण का एक बहुत बड़ा खतरा परमाणु परीक्षणों और रासायनिक युद्धों से है। जहरीली क्लोरीन गैस हजारों को एक साथ मारने में समर्थ है। अंतरिक्ष में होने वाले विस्फोटों आदि का भी पर्यावरण पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है। प्रदूषण से अनेक रोगों और विकृतियों के भय बने रहते हैं। इसलिए औद्योगिक गैसों पर नियंत्रण रखना जरूरी होगा।

स्वच्छ पर्यावरण के लिए सड़क पर दौड़ते वाहनों में उपयुक्त ईंधन के इस्तेमाल और विदेशी मुद्रा बचाने के उपायों पर चल रही बहस में वैज्ञानिकों और पर्यावरणविदों ने पेट्रोल अथवा डीजल में इथेनोल का एक निर्धारित अंश मिलाए जाने को एक बेहतर विकल्प बताया है। उनका कहना है कि इस मिश्रण में कार्बन मोनोक्साइड की मात्रा अपेक्षाकृत कम होती है। इस संबंध में हाल ही में पर्यावरण और वन मंत्रालय तथा इंडियन रिन्यूएबल एनर्जी डेवलपमेंट ऐजेंसी (इरेडा) ने एक दो दिवसीय कार्यशाला का आयोजन किया गया। इसमें पधारे प्रतिनिधियों ने बताया कि देश में स्वच्छ पर्यावरण के लिए केन्द्र सरकार ने हाल ही में महाराष्ट्र और उत्तर प्रदेश में पेट्रोल में पाँच प्रतिशत इथेनोल मिलाए जाने के लिए इंडियन आयल से एक अध्ययन करवाया था। अध्ययन के बाद सरकार को दी गई रिपोर्ट में कहा गया है कि पेट्रोल में पाँच प्रतिशत इथेनोल मिलाए जाने का इंजन पर कोई दुष्प्रभाव नहीं हुआ और आशा के

अनुरूप इसके परिणाम ठीक रहे। इस रिपोर्ट से प्रोत्साहित होकर सरकार ने यह निर्णय लिया कि पेट्रोल में अब पहले से दोगुना अर्थात् दस प्रतिशत इथेनोल मिलाया जा सकता है। लेकिन यह निर्णय सारे देश में लागू करने की बजाए केवल आठ प्रदेशों उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र, कर्नाटक, तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश, गुजरात और हरियाणा में लागू किए जाने की सिफारिश की गई। कार्यशाला का आयोजन एक गैर–सरकारी संस्था विनरॉक इंटरनेशनल इंडिया ने किया था। संस्था के प्रवक्ता सरोज मिश्र ने कार्यशाला में हुई चर्चा के बारे में बताया कि अमेरिका, कनाडा और ब्राजील तथा यूरोप के कुछ देशों में पेट्रोल में 10 से 24 प्रतिशत तक इथेनोल इस्तेमाल किया जाता है। भारत में भी ब्यूरों आफ इंडियन स्टैंडर्ड (बीआईएस) ने 5 प्रतिशत इथेनोल मिलाए जाने की स्वीकृति दी है। हालांकि इथेनोल का प्रयोग अभी खुल कर शुरू नहीं हुआ है। इथेनोल गन्ने के रस में मोलासेस से निकाला जाता है। फिलहाल भारत में महाराष्ट्र और उत्तर प्रदेश ही ऐसे राज्य हैं जहाँ 300 मिलियन लीटर इथेनोल निकाला जाता है।

ध्वनि प्रदूषण

ध्वनि की मात्रा सघनता, दबाव और उच्चता या तारत्व से नापा जा सकता है। वैसे इसकी नाप खोज करना कठिन कार्य है, पर वैज्ञानिकों ने इसके लिए एक डेसिबल माप प्रणाली अपनाई है। इसमें कोई संदेह नहीं कि शोर कान के लिए बहुत हानिकारक वस्तु है। शोर मानव, उसके आराम, स्वास्थ्य और जीवन पद्धति में दखल या खलल के रूप में काम करता है। आज कारखानों की संख्या ही नहीं, सड़क पर चलने वाले वाहनों की संख्या भी निरन्तर बढ़ती जा रही है। फलतः शोर हर साल वृद्धि की ओर है। मोटरकारों की भाँति हवाई जहाज का शोर भी हानिकारक होता है। कल कारखानों, जहाजों, मोटरगाड़ियों, रेडियों, टेलिविजन, लाउडस्पीकरों पर होने वाले जागरण आदि शोर के बड़े कारण कहे जा सकते हैं। इसका सबसे बुरा असर श्रवण शक्ति पर पड़ता है। शोर शरीर और हृदय तंत्र पर बुरा प्रभाव डालता है, इससे मानसिक तनाव भी बढ़ता है। सघन और निरंतर चलने वाला शोर रक्तचाप को बढ़ाता है। इक्कीसवीं सदी में शोर की मात्रा बढ़ती ही जाएगी, किन्तु इसके लिए उपाय भी खोजे जा रहे हैं। बूढ़े लोगों पर इसका अधिक प्रभाव पड़ता है। यदि हम आने वाली सदी में शोर पर नियन्त्रण न कर सके तो भयानक मानसिक परिणाम होंगे। इसके लिए आवश्यक है कि तेज शोर पर काबू पाया जाए। 8 घंटे काम के वक्त शोर की दर 85 डेसिबल से अधिक न हो। कान के लिए रक्षक उपकरणों का उपयोग किया जाए।[2]

उत्तर प्रदेश में जनरेटरों से उत्पन्न ध्वनि प्रदूषण पर अंकुश लगेगा

जनरेटरों की धक–धक और इससे उत्पन्न हो रहे ध्वनि प्रदूषण पर अंकुश लगाने के प्रयास शुरू हो गए हैं। इन्हीं प्रयासों के चलते अब उत्तर प्रदेश सरकार ने एक शासनादेश जारी किया है, जिसके तहत अब जनरेटरों के प्रयोग पर नियंत्रण तो होगा ही, साथ ही लोगों को शोर से भी कुछ हद तक छुटकारा मिलेगा। अब जनरेटरों की चिमनी निकटतम छत से न्यूनतम डेढ़ मीटर ऊँची लगानी होगी। बिजली संकट से उबरने के लिए जिस हद तक जनरेटरों का इस्तेमाल हो रहा था, उससे वातावरण काफी हद तक प्रदूषित हो रहा था। अतः उत्तर प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड द्वारा जारी प्रदूषण मानकों पर राज्य सरकार ने शासनादेश जारी करके समस्त जिलाधीशों को जनरेटरों के इस्तेमाल करने के संबंध में कुछ निर्देश जारी किए और उनका कड़ाई से पालन करने को कहा है। शासनादेश के अनुसार 5 के.वी.ए. व उससे अधिक क्षमता के डीजल वाले जनरेटरों में शोर को नियंत्रित करने के लिए ध्वनि अवरोधक इस तरह से डिजाइन किए जाएं, जिससे ध्वनि शक्ति सीमा में 25 डेसिबल की कमी आए। इसके अलावा जनरेटर के आधार में कंपन–रोधी पैड लगाए जाएं, जिससे कंपन्न में कमी आए। जनरेटर सेट की चिमनी संबंधित भवन या निकटतम मकान की सबसे ऊँची छत पर लगाई जानी चाहिए। 50 के.वी.ए. तक के जनरेटरों के लिए चिमनी की ऊँचाई छत से डेढ़ मीटर, 100 के.वी.ए. के लिए दो मीटर, 150 के.वी.ए. के लिए ढाई मीटर, 200 के.वी.ए. के लिए तीन मीटर, 250 के.वी.ए. के लिए सवा तीन मीटर, 300 के.वी.ए. के लिए साढ़े तीन मीटर होनी चाहिए। शासनादेश में विभिन्न क्षेत्रों में ध्वनि तीव्रता का स्तर भी निर्धारित कर दिया गया है। औद्योगिक क्षेत्रों में दिन की ध्वनि तीव्रता 75 व रात के समय में 70 डेसीबल से अधिक नहीं होनी चाहिए। बाजार आदि व्यावसायिक क्षेत्रों में 65 व 56 आवासीय क्षेत्रों में 55 व 45

डेसीबल ध्वनि तीव्रता होनी चाहिए। अस्पतालों, शैक्षिक संस्थानों, न्यायालयों आदि के आसपास का क्षेत्र शांत क्षेत्र के रूप में परिभाषित किया गया है। शासनादेश में कहा गया है कि बैंकों व कार्यालय प्रमुखों से बातचीत करके प्रदूषण पर रोक लगाए। इसके अलावा व्यापार मंडलों, वाणिज्यिक संगठनों से वार्ता करके एक स्थान पर सामूहिक जनरेटर सेट लगाए जाएं। आज सभी राज्य सरकारों को इस प्रकार के कदम उठाने की आवश्यकता है ताकि ध्वनि प्रदूषण को नियंत्रित किया जा सके।

पर्यावरण शुद्धि में वर्षा का महत्व

वायु प्रदूषण आदि को नियंत्रित करने में वर्षा की बहुत बड़ी महत्ता है। हर प्रकार के प्रदूषित कणों को वर्षा धो डालती है और उससे हमें एक साफ और स्वच्छ वायुमंडल मिलता है। प्राचीन भारतीय वाङ्मय में इसकी महत्ता को निर्धारित किया गया है। इसमें कहा गया है कि वृष्टि से अन्न आदि यज्ञ के पदार्थ उत्पन्न होते हैं और याजकगण वृष्टि के गुणों को गा गाकर आनन्द मनाते हैं। **सर्गा वर्षस्य तो वर्षन्तु पृथिवीमनु।**[3] वर्षा और पर्यावरण शुद्धता के संबंध में वेदों में यत्र–तत्र विवरण मिलता है। एक और ऋचा द्रष्टव्य है जिसमें कहा गया है कि जल, पवन और आकाश द्वारा पृथ्वी से मेघमंडल में चढ़ना और फिर पृथिवी पर बरसकर अनेक पदार्थ उपजाता है, इसी प्रकार सज्जन पुरूष विज्ञान से परिपूर्ण होकर संसार में विद्या फैलाते हैं (अथर्ववेद)।[4]

पर्यावरण और जनसंख्या

प्राकृतिक–सम्पदा का समुचित विकास एवं उपयोग करने के लिए किसी भी देश या क्षेत्र में विशिष्ट सीमा तक जनसंख्या का होना आवश्यक है, लेकिन इस सीमा के बाद लोगों की संख्या की अपेक्षा उनकी गुणवत्ता देश को समृद्ध बनाने में अधिक योगदान देती है। किसी देश या क्षेत्र की जनसंख्या के आकार, उसके वितरण एवं विविध संरचना को उस देश या क्षेत्र में उपलब्ध प्राकृतिक साधनों और उसके लोगों द्वारा उत्पादन के लिए अपनाई गई विभिन्न तकनीकों के संदर्भ में अध्ययन करना आवश्यक हो गया है। किसी क्षेत्र में प्राकृतिक साधनों के उपयोग की सीमा और उनके प्रयोग करने की विधियाँ उस क्षेत्र के अत्यधिक बसे हुए अथवा कम बसे होने का एक मापदण्ड है। जब एक देश या क्षेत्र में वहाँ की जनसंख्या और वहाँ के उपलब्ध साधनों के बीच एक प्रकार का संतुलन स्थापित हो जाता है तो लोगों की उस संख्या को उस क्षेत्र या देश की अनुकूलतम जनसंख्या कहते हैं।[5]

पर्यावरण और कानून

पर्यावरण के संबंध में सरकार ने सन् 1976 ई. में एक कानून पास किया। संविधान में 'राज्य की नीति के निर्देशक सिद्धान्त' के अध्याय में यह बात और जोड़ी गई– 'पर्यावरण की सुरक्षा करना राज्य का कर्त्तव्य होगा। राज्य पर्यावरण को बेहतर बनाए। देश के जंगलों और जंगली जानवरों की सुरक्षा करें।' इस तरह सरकार के लिए यह जरूरी हो गया कि वह पर्यावरण, जंगलों और जंगली जानवरों की सुरक्षा करे। भारत सरकार ने पर्यावरण के कामकाज को देखने के लिए एक बोर्ड भी बनाया है, इसका नााम है : 'पर्यावरण नियंत्रण तथा निवारण बोर्ड'।

उपसंहार

भारतीय संस्कृति में पर्यावरण के शोषण नहीं पोषण की परंपरा रही है। पर्यावरण संरक्षण का विधान और उसका ह्रास या नष्ट करने वाले कार्यों/कृत्यों का निषेध था। आधुनिक युग में पर्यावरण एक गम्भीर और चुनौतीपूर्ण समस्या है और इस समस्या का मुख्य कारण है– भारतीय प्राचीन वाङ्मय में निर्देशित और स्थापित व्यवस्था का अतिक्रमण। यदि हम अब उक्त विधान का अनुपालन करें तो पर्यावरण संरक्षण के उपाय हो सकते हैं अन्यथा वह समय अधिक दूर नहीं जब सृष्टि विनाश के कगार पर होगी। निष्कर्ष के रूप में हम कह सकते हैं कि पर्यावरण नीति एकीकृत व समेकित रूप में तैयार की जानी चाहिए। सम्पूर्ण मानव पर्यावरण की देखरेख और विकास में विभिन्न प्राकृतिक प्रक्रियाओं का सावधानी से प्रयोग करे। भारत के लिए एक पर्यावरण नीति राष्ट्रीय तथा वैश्विक एकता पर आधारित होनी चाहिए और हमारी सांस्कृतिक धरोहर के समरूप होनी चाहिए। प्रकृति के साथ इस नीति का मुख्य संबंध सुखद होना चाहिए। इकोसिस्टम के अर्थशास्त्र को समझना आवश्यक है। पर्यावरण (संरक्षण) अधिनियम, 1986 का कार्यान्वयन इस प्रकार से होना चाहिए जिससे कि उपर्युक्त लक्ष्यों को प्राप्त करने में पर्याप्त सहायता मिले। भारत के पास साधनों की कमी नहीं है। हमारे देश में कोयला, तेल, खनिज,

जल आदि भौतिक साधनों के भण्डार इक्कीसवीं सदी में एकदम खत्म होने वाले नहीं हैं। किन्तु इनका उपयोग नियोजित ढंग से होना चाहिए, जिससे कि पर्यावरण संरक्षण के साथ–साथ इन संसाधनों की आयु भी बढ़ाई जा सके। जहाँ तक उद्योगों का प्रश्न है अगली सदी में उनकी संख्या लगभग डेढ़ गुना तो बढ़ेगी ही। इसी मात्रा में प्रदूषण भी होगा और हमें उसे रोकने के उपाय भी उतने ही तेज करने होंगे।

हमें व्यर्थ जा रहे जल के उपयोग के समुचित उपाय करने होंगे। नदियों को जोड़ने की योजना जल के संरक्षण और वितरण की दृष्टि से उपयोगी हो सकती है। भूमि का क्षरण रोकने के लिए पेड़ लगाना और जंगल खड़े करना तेजी से आरम्भ करना पड़ेगा। प्रसन्नता की बात यह है इस क्षेत्र में भी हमारे वैज्ञानिकों ने पहल शुरू कर दी है। वैकल्पिक ऊर्जा के साधन ढूंढे जा रहे हैं। उद्योगों द्वारा निकाले गए कचरे, रेडियोधर्मी अपशिष्ट आदि के प्रदूषण से बचने के लिए अब वैज्ञानिकों ने इस तरह परामर्श देना प्रारम्भ कर दिया है कि ज़मीन के नीचे उसे गहरे से दबा दिया जाए। कारखानों द्वारा उत्पादित प्रदूषण को कम करने के लिए एक सुझाव यह भी है कि चिमनियाँ ऊँची कर दी जाएं। आज आवश्यकता इस बात की है कि पर्यावरण के प्रति हम जागरूक रहें। पर्यावरण से हमारा सीधा संबंध है उसमें प्रदूषण की मात्रा बढ़ने न दें। सामाजिक वानिकी की तरफ ध्यान दिया जाए। बाल्यावस्था से ही पर्यावरण चेतना उत्पन्न कर दी जाए तथा प्रौढ़ों में पर्यावरण–जागृति पैदा की जाए।

संदर्भ–ग्रन्थ

1. पं. श्रीराम शर्मा आचार्य : ऋग्वेद भाष्य, संस्कृति संस्थान, ख्वाजा कुतुब, वेदनगर बरेली, संस्करण 1972
2. पं. श्रीराम शर्मा आचार्य : अथर्ववेद भाष्य, संस्कृति संस्थान, ख्वाजा कुतुब, वेदनगर बरेली, संस्करण 1972
3. वही
4. वही
5. हरिनारायण कोली : पर्यावरण एवं मानव संसाधन, पोईन्टर पब्लिशर्स, जयपुर, राजस्थान, 1996
6. सालेह मोहम्मद नायब, पर्यावरण–प्रदूषण : एक चुनौती, सन्मार्ग प्रकाशन, दिल्ली–7, 1995